ज्ञान से; **ध्यानम्**=ध्यान; **विशिष्यते**=श्रेष्ठ माना जाता है; **ध्यानात्**=ध्यान से भी, **कर्मफलत्यागः**=सब कर्मों के फल का मेरे लिये त्याग करना (उत्तम है); **त्यागात्**=इस त्याग से; **शान्तिः**=शान्ति मिलती है; **अनन्तरम्**=तत्काल।

अनुवाद

यदि यह अभ्यास भी नहीं कर सकता तो ज्ञान का अनुशीलन कर; ज्ञान से ध्यान श्रेष्ठ है और ध्यान से भी सब कर्मों के फल का त्याग करना उत्तम है, क्योंकि त्याग से तत्काल शान्ति मिलती है।।१२।।

तात्पर्य

पूर्ववर्ती श्लोकों में कहा जा चुका है कि भक्ति दो प्रकार की है—वैधी और रागानुगा। जो यथार्थ में कृष्णभावना के सिद्धान्तों का अनुसरण करने के योग्य नहीं हैं, उनके लिए ज्ञान का अनुशीलन करना अधिक श्रेयस्कर है, क्योंकि ज्ञान से अपनी वास्तविक स्थिति को समझा जा सकता है। शनैः-शनैः ज्ञान ध्यान में विकसित हो जायगा। ध्यान की क्रमिक पद्धति से भगवत्-तत्त्व को जाना जा सकता है। अहंग्रहोपासना की पद्धति में अभ्यासकर्ता अपने को ही परम तत्त्व मानता है। यह ध्यानविधि उनके लिए है, जो भक्तियोग के अयोग्य हैं। जो इस प्रकार ध्यान भी नहीं कर सकते, उनके लिए वर्णाश्रम-धर्म का विधान है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों के स्वधर्म के रूप में इनका विस्तृत वर्णन अट्ठारहवें अध्याय में है। इन सभी साधनों में अपने कर्मों का फलत्याग कर देना चाहिए, अर्थात् कर्मफल का सदुपयोग करना चाहिए। सारांश में, परमलक्ष्य श्रीभगवान् की प्राप्ति के क्रमिक तथा सीधा, ये दो मार्ग हैं। कृष्णभावनाभावित भक्तियोग सीधा मार्ग है, जबकि कर्मफलत्याग करने से भगवत्प्राप्ति शनैः-शनैः ही हो सकती है। कर्मफल का त्याग करने से ज्ञान होता है, ज्ञान से ध्यान होता है और ध्यान से परमात्मा का और अन्त में श्रीभगवान् का साक्षात्कार होता है। मनुष्य स्वेच्छानुसार भक्तियोग के सीधा मार्ग को अथवा फलत्याग के क्रमिक मार्ग को अपना सकता है। सीधे मार्ग को ग्रहण करने की योग्यता सब में नहीं होती; अतः क्रमिक मार्ग भी उपयोगी है। परन्तु अर्जुन के लिए क्रमिक मार्ग का उपदेश नहीं है, क्योंकि वह तो पहले से ही भगवत्प्रेमी है। जो भगवद्भक्ति से शून्य हैं, उन्हीं के लिए त्याग, ज्ञान, ध्यान तथा परमात्मा और ब्रह्म की अनुभूति के क्रमिक मार्ग का विधान है। जहाँ तक भगवद्गीता का सम्बन्ध है, उसमें सीधे मार्ग की ही स्तुति है। अतएव गीता के अनुसार मनुष्यमात्र को सीधे भक्तिमार्ग को अंगीकार करके अनन्य भाव से भगवान् श्रीकृष्ण के शरणागत हो जाना चाहिए।

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च।
निर्ममो निरहंकारः समदुःखसुखः क्षमी।।१३।।
संतुष्ट सततं योगी यतात्मा दृढनिश्चयः।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्यो मद्भक्तः स मे प्रियः।।१४।।